IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 21, Issue 6, Ver. 1 (June. 2016) PP 84-87
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

राजस्थानी चित्रकला का विवेचन

डॉ. रंजीता जाना
प्रवक्ता, इतिहास विभाग
एल.बी.एस. महिला पीजी कॉलेज ,बधाल, जयपुर ,राजस्थान

राजस्थान की सभ्यता और संस्कृति को गौरवान्वित करने का श्रेय यहाँ की चित्रकला को भी रहा है। चित्रकला का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना मानव सभ्यता के विकास का इतिहास। क्योंकि मानव ने अपना सांस्कृतिक विकास करने के लिए जिन साधनों को अपनाया उनमें चित्रकला भी एक साधन है। राजस्थानी चित्रों में हमको भारत की उस शास्त्रीय पद्धति के दर्शन होते है जिनमें दृष्टि, विज्ञान तथा सौंदर्य निरीक्षण का बडा ही मार्मिक विश्लेषण है। भारतीय चित्रकला को जो समृद्धि प्राप्त हुई है उसमें राजस्थान की चित्रकला का अमूल्य योगदान रहा है।[1]

नामकरण :– राजस्थानी चित्रकला के नामकरण पर विद्वानों में विभिन्न मत है। अनेक विद्वान राजपूत चित्रकला और राजस्थानी चित्रकला को पर्यायवाची मानते है। ब्राऊन का मानना था कि केवल राजपूत राजाओं अथवा उनके जमींदारों के संरक्षण में ही चित्रकला पनपी थी, इसलिए वे इसे राजपूत चित्रकला कहते है। पर वास्तव में राजस्थान में चित्रकला को सेठ–साहूकारों तथा धार्मिक संस्थाओं, कला–प्रेमियों और साधारण लोगों के द्वारा भी प्रोत्साहन दिया गया। इसलिए राजपूत कला कहना अधिक युक्ति सुगंत प्रतीत नही होता। श्री एन.सी. मेहता ने इस शैली को हिन्दू शैली कहा जो युक्तिसंगत नही है। वास्तव में राजस्थान में चित्रकला की जिस शैली का उत्कर्ष व विकास हुआ उसे राजस्थानी चित्रकला कहकर पुकारना चाहिए।[2]

राजस्थानी चित्रकला का सबसे पहला वैज्ञानिक विभाजन स्वर्गीय आनंद कुमार, स्वामी ने राजपूत पेन्टिंग नामक पुस्तक में 1916 में किया।

उद्भव व विकास :–

राजस्थानी चित्रशैली का क्षेत्र बहुत समृद्ध है। उसकी समृद्धि के अनेक केन्द्र है। राजस्थानी चित्रकला की जन्मभूमि मेदपार (मेवाड) है, जिसने अजंता चित्रण परंपरा को आगे बढाया। गुप्तकाल तक राजस्थान में भी चित्रकला पर्याप्त रूप से विकसित हो चुकी थी और उधर चित्रकला का कलेवर भी काफी विकसित हो चुका था। आठवी शताब्दी के प्रारंभ से अरब के मुसलमानों ने पश्चिमी भारत पर आक्रमण करने आरंभ किए तो उनसे बचने के लिए अनेक विख्यात कलाकार अपने निवास स्थान गुजरात, मध्यभारत आदि प्रदेशों को छोडकर राजस्थान के दक्षिणी, दक्षिणी पश्चिमी व दक्षिणी–पूर्वी भागों में आकर बस गए। यहां आकर उन चित्रकारों ने स्थानीय शैलियों के चित्रों को अजंता परंपरा से आबद्ध किया। परिणामतः अनेक चित्रित ग्रंथ रचे गए जैसे निषीथचूर्णि, पुरूषचरित्र, नेमिनाथ चरित्र, कल्पसूत्र, कालकानाथ आदि। पर्सी ब्राउन ने तो राजपूत चित्र शैली का अर्थ ही अजंता की प्राचीन शैली से लिया है।

अजंता के नजदीक होने के कारण इस परम्परा के चित्रकार गुजरात से पहले मेवाड और फिर मारवाडा पहुंचे, जहां उन्होने अजंता परम्परा को ही परिवर्धित किया।[3] गुजरात के चित्रकारों ने मेवाड और मारवाड में आकर अजंता शैली से प्रभावित होकर जो चित्र बनाये उनमें जैन साधुओं का भी योगदान रहा। उन चित्रों को जैन शैली के अन्तर्गत बताया गया। कालान्तर में इन चित्रों को गुजरात शैली के अन्तर्गत निर्धारित किया गया।

इस शैली के प्रसिद्ध चित्र बालगोपाल स्तुति, दुर्गासप्तशती गीत गोविन्द आदि थे। अजंता की गुफाओं की चित्रकला बौद्ध चित्रकला से बहुत प्रभावित है और अजंता की चित्रकला से राजपूत चित्रकला प्रभावित हैं। अतः डॉ. स्मिथ का कहना उचित है कि निःसंदैह राजपूत चित्रशैली के ऊपर बौद्ध चित्रकला का स्पष्ट प्रभाव है, परंतु दोनो की शैलियो में असमानता है।[4]

इस प्रकार राजस्थानी चित्रकला पर प्रारम्भ में जैन शैली, गुजरात शैली और अपभ्रंश शैली का प्रभाव बना रहा किन्तु बाद में राजस्थान की चित्रशैली मुगलकाल में समन्वय स्थापित कर परिमार्जित होने लगी। सत्रहवी शताब्दी से मुगल साम्राज्य के प्रसार और राजपूतों के उनके साथ बढते राजनीतिक और वैवाहिक सम्बन्धों के फलस्वरूप राजपूत चित्रकला पर मुगल शैली का प्रभाव बढने लगा। 17 वीं शताब्दी और 18 वीं शताब्दी आरंभिक काल को कुछ विद्वानों ने राजस्थान चित्रकला का स्वर्णयुग माना। अधिकांश रियासतों के चित्रकारों ने जिन–जिन तौर–तरीको से चित्र बनाए, स्थानानुसार अपनी परिवेशगत, मौलिकता, राजनैतिक सम्पर्क, सामाजिक सम्बन्धो के कारण वहां की चित्रशैली कहलायी। भौगोलिक एवं सांस्कृतिक आधार पर राजस्थान चित्रकला को हम चार प्रमुख शैलियो तथा अनेक उपशैलियों में बांट सकते है।

1. मेवाड शैली (चांवड, उदयपुर, नाथद्वारा, देवगढ़, आदि उपशैलियों से सम्बन्धित)
2. मारवाड शैली (जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, किशनगढ, अजमेर, पाली, नागौर आदि उपशैलियों से सम्बन्धित)
3. हाडौती शैली (बूंदी, कोटा, झालावाड शैली और उपशैलियों से सम्बन्धित)

4. ढूंढाड शैली (आम्बेर, जयपुर, अलवर, शेखावाटी, उणियारा उपशैलियों से सम्बन्धित)

राजस्थान चित्रकला के विकास के चरण :–

राजस्थानी चित्रकला का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। उसकी समृद्धि के अनेक केन्द्र है जो मध्य भारत से राजस्थान के व्यापक भू भाग तक विस्तृत है। प्रसिद्ध विज्ञान यशोधर पण्डित ने कामसूत्र पर जय मंगला नाम से एक प्रसिद्ध टीका लिखी है। इस टीका में चित्रकला के 6 अंगो का विस्तार से वर्णन किया गया है।
चित्रकला के षंडगो के नाम है – 1. रूपभेद 2. प्रमाण 3. भाव 4. लावण्ययोजन 5. सादृश्य 6. वर्णिका भंग।

उपर्युक्त गुणों से युक्त अजन्ता की कलाकृतियों का निर्माण 300 ई.पू. से 700 ई. तक चला। इस अंजता शैली में भी बीस विभिन्न शैलियों का मिश्रण है। अजंता चित्रकला का विकास मौर्य, शुंग, सातवाहन, कुषाण, वाकाटक शासको के संरक्षण में हुआ उसी प्रकार राजस्थान चित्रकला का विकास राजपूत नरेशो के संरक्षण में हुआ। 15 वीं सदी कला के इतिहास में महत्वपूर्ण शती मानी जाती है, इस काल में राजस्थान कला के विभिन्न अंगो का सृजन हुआ, इस काल विशेष में बने उनके चित्र तथा पाण्डुलिपियां उपलब्ध हुई है। इस चित्रों के आधार पर राजस्थानी शैली की परंपरा का इतिहास प्रकाश में आया है।

इन चित्रों के अवलोकन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि इनकी रचना का मूल उद्देश्य आश्रयदाताओं का मनोरंजन करना मात्र था। उनका विषय क्षेत्र राजमहलों तक सीमित रहा। निःसदेह इनमे कुछ उच्चकोटि के वेतनभोगी चित्रकार थे। परंतु अधिकतर इन चित्रों की विषय सामग्री राजाओं के व्यक्तिगत जीवन व दरबार के वातावरण तक सीमित रही। यही परंपरा दिल्ली सल्तनत तक चली रही। अतः राजस्थान चित्रकला का विकास प्रथम दरबारी चित्रकला के रूप में हुआ। इन चित्रकारों की कला सामाजिक जीवन को अभिव्यक्त नही पाती है।

सल्तनत काल में चित्रकला का विकास रूक गया था, जैसा कि आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने लिखा कि भारतवर्ष मे मुस्लिम शासन स्थापना के बाद चित्रकला के विकास को प्रोत्साहन नही मिला। चित्रकला को कुरान विरोधी मानने के कारण दिली सल्तनत के सुल्तानों ने चित्रकला को प्रतिबंधित किया फलस्वरूप राजस्थान चित्रकला भी नष्ट हुई। राजस्थानी चित्रकला ईरानी चित्रकला से प्रभावित हुई।[5]

मुगलकाल (अकबर) में राजस्थानी चित्रकला पल्लवित हुई। मुगल सम्राट अकबर के सम्पर्क में आने के बाद जब राजपूत राजाओं का मुगल दरबारी जीवन के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित हुआ तो राजस्थान चित्रकला भी प्रभावित हुई। मध्यकाल में बने प्राचीन चित्र आज भी सुरक्षित है। मुगल सम्पर्क के पश्चात राजस्थानी चित्रकार अपने चित्रों में बोर्डर बनाने लगे, पशुपक्षियों की मूर्तियों को चित्रित करने लगे अथवा चित्रो में जो पुरूषों और स्त्रियों की आकृतियां बनाई गई उनको पारदर्शक कपडे पहनाए हुए चित्रित किया गया। मुगलों के आने से पहले चित्रों की आकृतियां शार्प बनायी जाती थी तथा सुनहरी लाल या गहरे नीले रंग का प्रयोग किया जाता था परंतु मुगल संपर्क के बाद चित्रकारों ने नवीन ढंग के चित्र (पोट्रेट, पेन्टिंग, फ्रेस्को) बनाने शुरू किए।[6] पर्सी ब्राउन का कहना है अकबर का शासनकाल मुगल संस्कृति के विकास के लिए सर्वाधिक उपयुक्त था। अकबर की व्यक्तिगत रूचि ने ही चित्रकला के विकास में नवजीवन प्रदान किया ।[7] भित्ति चित्र शैली का विकास अकबर की ही देन मानी जाती है। डॉ. स्मिथ के अनुसार भित्ति चित्र अपने सुंदर चित्रण और रंगाई के लिए अद्वितीय हैं।[8] 1567 ई. में अकबर ने अमीज हमजा की कथाओं को चित्रित करने के लिए राजपूत राज्यों सहित देश के विभिन्न भागो से सर्वश्रेष्ठ चित्रकारो को आगरा आमंत्रित किया था । चित्रकला शैली की यही आधारशिला जो अकबर काल में शुरू हुई वह जहांगीर काल में और विकसित हुई। जहांगीर काल में चित्रकला, उसके व्यक्तिगत प्रोत्साहन के परिणामस्वरूप विदेशी प्रभाव से मुक्त होकर स्वावलम्बी बनी।[9]

चित्रकला के प्रादुर्भाव की बात करें तो निःसंदेह राजपूत चित्रकला मुगल चित्रकला से प्राचीन ठहरती है। जब मुगल भारत में आए तब राजपूत शैली की जडे जम चुकी थी। इतना अवश्य है कि राजपूत नरेशों व मुगल शासको की घनिष्ठता से राजपूत चित्रशैली पर मुगल चित्रकला शैली का प्रभाव अवश्य पडा, जो स्वाभाविक था।[10] राजपूत मुगल शैलियों में समानता होते हुए भी दोनो का विषय–वस्तु भिन्न है। मुगलकालीन चित्रकारो का विषय मुगल सम्राटो व उनकी बेगमो के भौतिकवादी जीवन का प्रदर्शन करना था इसके विपरित राजस्थान चित्रकारों ने आध्यात्मिक विषय तथा जनसाधारण के जीवन को प्राथमिकता दी है।[11] राजपूत चित्रकारों ने काल्पनित जगत का नही, वरन् चित्र के माध्यम से संसार के गूढ तत्वों का प्रदर्शन कराया है।[12] 18 वीं शताब्दी के मध्य में मुगल व राजपूत दोनो चित्रशैलियों में परिवर्तन झलकने लग गया था। 19 वीं सदी में जब राजपूत नरेश, अंग्रेजों की पराधीनता में चल गये तो उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय हो गई। इसी कारण वे चित्रकला के विकास की ओर पर्याप्त ध्यान नही दे सके और धीरे–धीरे चित्रकला का व्यावसायीकरण हुआ परिणाम स्वरूप राजस्थान चित्रकला पतनोन्मुख हो गई।

राजस्थानी चित्रकला की विशेषताएँ –

1. राजस्थानी चित्रकला रस प्रधान है। राधाकृष्ण की माधुर्य भावना का विस्तृत और गहनतम चित्रण इस चित्रकला की विशेषता है।
2. राजस्थानी चित्रकला का कलेवर प्राकृतिक सौंदर्य के आंचल में रहने के कारण अधिक मनोरम हो गया है।
3. राजस्थान चित्रकला का लोकजीवन से विशेष सानिध्य रहा है।
4. राजस्थानी चित्रकला विषय की दृष्टि से अधिक विस्तृत है। राधाकृष्णन की लीला, रामकथा, महाभारत और भागवत पुराण की कथाएं, बारहमासा, ऋतुवर्णन, राजारानी चित्रांकन, दरबारी जीवन, लोक कथाएं आदि असंख्य विषयों पर राजस्थानी चित्रकला आधारित है।

5. राजस्थानी चित्रकला की प्रमुख विशेषता रंगो की विविधता है। विविध रंगो के समन्वय से कालाकरो ने चित्रण को सतरंगी बना दिया है।[13]

राजस्थानी चित्रशैली का वर्गीकरण :–

1. **मेवाड शैली –** राजस्थानी चित्रकला का प्रारम्भिक और मौलिक स्वरूप मेवाड शैली मे दृष्टव्य है। राणा कुंभा, सांगा आदि की कलात्मक रूचियों के कारण यहां कला का विकसित हुआ। जो राणा जगतसिंह, राजसिंह, जयसिंह, अमरसिंह द्वितीय के समय फली फूली। 16 वीं शताब्दी के अंत में महाराणा प्रताप की राजधानी मे मेवाड चित्रकला शैली का स्वरूप चांवड शैली के रूप में विकसित हुआ। इस काल का प्रसिद्ध कृति ढोलामारू है। महाराणा अमरसिंह के समय का चित्रित ग्रंथ राजमाला है जिसके चित्रकार निसारदीन थे। चित्रकला की दृष्टि से महाराणा जगत सिंह प्रथम का काल स्वर्णयुग कहलाता है, इसकाल में साहबदीन प्रमुख व्यक्ति चित्र कलाकार था, जिसने महाराणाओ के चित्र बनाए। जगतसिंह प्रथम के समय राजमहल मे चितेरो की ओवरी नामक कला विद्यालय स्थापित किया गया इसे तस्वीरां रो कारखानो भी कहा गया।[14]

   मेवाड शैली का दूसरा मोड नाथद्वारा शैली मे दृष्टव्य है। 1670 मे ब्रज की चित्रण परंपरा विरासत मे यहां आई और उदयपुर शैली तथा ब्रजशैली के समन्वय से नाथद्वारा शैली का उद्‌भव हुआ। श्री नाथ जी के स्वरूप के पीछे बडे आकार के कपडे पर जो पर्दे बनाए जाते है। उन्हे पिछवई कहते है जो नाथद्वारा शैली की मौलिक देन है।

2. **मारवाड शैली :–** राठौडवंशी जोधा द्वारा स्थापित जोधपुर, बीका द्वारा बीकानेर किशनसिंह द्वारा किशनगढ राज्यों एवं पडौस के राज्यों में विकसित होने वाली चित्रकला मारवाड शैली के नाम से जानी जाती है, मारवाड चित्र शैली के विषय मारवाडी साहित्य के प्रमाख्यान पर आधारित है। ढोलामारू रा दूहा वेलि किसन रूक्मिणी री, वीरमदे सोनगरा री बात, फूलमती री वार्ता आदि साहित्यक कृतियों के चरित्र मारवाड चित्रकला के आधार रहे है। मारवाड चित्रशैली मे लाल–पीले रंग का बाहुल्य है। हाशिये मे भी पीले रंग का प्रयोग किया गया है। राजा मालदेव के समय जोधपुर शैली का उत्तराध्ययन सूत्र जो बडौदा संग्रहालय मे है, बहुत महत्वपूर्ण है। ढोलामारू तथा चित्रित भागवत जोधपुर शैली की प्रमुख दाय है। मारवाड शैली का दूसरा मोड महाराजा जसवन्त सिंह के समय में आया। इस शैली के पुरूष लम्बे चौडे गठिले बदन के तथा उनके गलमुच्छ ऊँची पगडी राजसी वैभव के वस्त्राभूषण लहंगा ओढनी आदि का प्रयोग हुआ।

   मारवाड शैली की दूसरी प्रमुख शैली बीकानेर शैली है, जिसका 16 वीं शताब्दी के अन्त में प्रादुर्भाव माना जाता है। बीकानेर का मथेरण परिवार पारम्परिक जैन मिश्रित राजस्थानी शैली के चित्र बनाने में दक्ष थे। तथा मुगल दरबार से आया उस्ता परिवार मुगल शैली मे माहिर था। कालांतर में इन उस्तादो को उस्ता कहा जाने लगा। महाराणा अनूपसिंह के समय उस्ता परिवार ने हिन्दू कथाओं, संस्कृत, हिन्दी राजस्थानी काव्यों को आधार बनाकर सैकडो चित्र बनाए।

   मारवाड शैली में किशनगढ शैली संसार प्रसिद्ध होने के कारण अलग शैली के रूप में चर्चित है। 1609 में जोधपुर के राजा उदय सिंह के आठवे पुत्र किशनसिंह ने अलग राज्य की नीव डाली। किशनगढ के अधिकतर राजा कवि, साहित्यकार व कला प्रेमी हुए। यहां के राजा वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित रहे इसलिए राधा–कृष्णन की लीलाओं का साकार स्वरूप चित्रण के माध्यम से बहुलता से हुआ। राजा सावंतसिंह के समय किशनगढ की चित्रकला मे नया मोड आया। नागरीदास जी के काव्य प्रेम, गायाण बणी ठणी के संगीत प्रेम और कलाकार मोरध्वज निहालचन्द के चित्रांकन ने इस समय किशनगढ मे चित्रकला को सर्वोच्च स्थान पर पहुंचा दिया। इस शैली में बणी ठणी, चांदनी रात की संगीत गोष्ठी प्रमुख चित्रित ग्रंथ है।

हाडौती शैली :–

3. **बूंदी शैली :–** हाडौती स्कूल के अन्तर्गत बूंदी शैली में पशु–पक्षियों के चित्रण की बहुलता है, नारंगी व हरे रंग की प्रधानता है। यहां के शासक भाव सिंह की कलाप्रियता ने बूंदी निवासियों को संगीत, काव्य और चित्रकला को उत्कृष्टता प्रदान की। इस शैली का प्रसिद्ध चित्र राव उम्मेद सिंह का जंगली सुअर का शिकार करते हुए बनाया चित्र है। यह शैली मेवाड शैली से प्रभावित रही। इस शैली मे एक सम्पूर्ण बारहमासा है, जिसमे चैत्र से लेकर फाल्गुन मास तक का चित्रण है। सघन प्राकृतिक सुषमा बूंदी शैली के चित्रों की विशेषता है।

   हाडौती शैली की दूसरी शैली कोटा शैली है। इस शैली का स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित इसका श्रेय रामसिंह को है। झालावाड के राजमहलों में श्री नाथजी, राधाकृष्णन लीला, रामलीला, राजसी वैभव के भीति चित्र प्राप्त होते है।

4. **दूंढाड शैली –** इस शैली पर मुगल प्रभाव सर्वाधिक रहा। इस शैली के प्रारम्भिक चित्रित ग्रंथो में यशोधरा चरित्र है। मिर्जा राजा जयसिंह ने आमेर चित्रशैली के विकास में योगदान दिया। इस शैली के प्रसिद्ध चित्र रसिक प्रिया और कृष्ण रूकमणि नाम चित्रित ग्रंथ है। इस शैली की समृद्ध परपंरा भित्ति चित्रो के रूप मे उपलब्ध है। जयपुर शैली का विकास महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय के काल में शुरू होता है। जब 1727 में जयपुर की स्थापना हुई, महलों व हवेलियों के निर्माण के साथ भित्ति चित्रण जयपुर की विशेषता बन गयी। जयसिंह के उत्तराधिकारी ईश्वरी सिंह के समय साहिबराम नाम प्रसिद्ध प्रभावशाली चितेरा था । जिसमें आदमकद चित्रों को

बनाकर नवीन परंपरा डाली। सवाई माधोसिंह तथा प्रतापसिंह के समय भी चित्रकला के क्षेत्र में विशेष उन्नति के दर्शन उस काल मे निर्मित महलों व हवेलियों में होते है। उद्यान चित्रण में जयपुर के कलाकार दक्ष थे।

ढूढांड शैली के अर्न्तगत अलवर शैली का विकास रावराजा प्रतापसिह, बख्तावर सिंह व विनयसिंह द्वारा किया गया। मुगल चित्रकला में जो स्थान अकबर का है वही अलवर चित्रकला मे विनयसिंह का है। जयपुर शैली के भित्ति चित्रण का सर्वाधिक प्रभाव शेखावाटी पर पडा। इस प्रकार मेवाड, मारवाड, हाडौती, ढूढांड शैली मे पल्लवित राजस्थानी चित्रकला आज बूंदी, किशनगढ़ आदि शैलियों के कारण आज विश्व प्रसिद्ध हो गयी है।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. रामगोपाल विजयवर्गीय : राजस्थानी चित्रकला, प्रस्तावना
2. भागर्व, वी.एस : राजस्थान का इतिहास पृ. 257
3. पर्सी ब्राउन : इण्डियन आर्कटेक्चर (इस्लामिक पीरियड) पृ. 54
4. डॉ. स्मिथ : ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सीलनो, पृ. 225।
5. पर्सी ब्राउन : इण्डियन पेंटिग, पृ. 38
6. वी.एस. भार्गव : राजस्थान का इतिहास 258
7. पर्सी ब्राउन, पृ. 48
8. डॉ. स्मिथ : ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सीलोन, पृ. 226
9. एडवर्ड एण्ड गैरेट : मुगल रूल इन इंडिया पृ. 223
10. शेरवानी : कल्चरल सिंथेसिस इन मेडिबल इण्डिया, पृ. 42
11. वही, पृ. 58
12. राधा कमल मुकर्जी : ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन षिपिंग, पृ. 342
13. डॉ. जयसिंह नीरज : राजस्थान की सांस्कृति परंपरा, पृ. 90
14. डॉ. हुकुमचंद जैन व श्रीमाली : राजस्थान इतिहास एवं संस्कृति एन साइक्लोपीडिया पृ. 348